INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS

Volume 3,Issue 1,January 2015

ISSN-2320-2882

ORIGINAL ARTICLE

धर्म, धर्मान्तरण और गाँधी

डॉ. जितेन्द्र शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र
म.गाँ.चि.ग्रा.वि.वि.,चित्रकूट सतना (म.प्र.)

आलेख सार

विगत महीनों से पूरा देश धर्मान्तरण की राजनीति में उबल रहा है। सरकार और समर्थक संगठन जहाँ एक तरफ धर्मान्तरण के कार्य को भूले भटके लोगों द्वारा 'घर वापसी' की संज्ञा देते हुये धर्मान्तरण को यह कहते हुये औचित्यपूर्ण बता रहे हैं कि ये वे लोग हैं जिनके पूर्वज कभी हिन्दू थे और जिन्होंने भयवश अथवा लालचवश हिन्दू धर्म छोड़कर इस्लाम या इसायत को स्वीकार कर लिया था वहीं दूसरी तरफ सम्पूर्ण विपक्ष धार्मिक अल्पसंख्यक तुष्टिकरण का लबादा ओढ़कर धर्मनिरपेक्षता की आड़ में धर्म की अँगीठी पर राजनीतिक रोटियाँ सेंक रहा है, केन्द्रीय विधायिका में सार्थक और सकारात्मक बहस के बजाय सदन का वर्हिगमन कर रहा है और धर्मान्तरण को भारत के संवैधानिक ढाँचे पर प्रहार बता रहा है। ऐसे में धर्म के सच्चे स्वरूप और धर्मान्तरण पर चिंतन करना हर प्रबुद्ध भारतीय नागरिक का राष्ट्रीय कर्त्तव्य हो जाता है। प्रस्तुत आलेख में धर्म और धर्मान्तरण के सम्बंध में पूज्य बापू के विचारों पर चिंतन करने के साथ ही धर्मान्तरण के औचित्य–अनौचित्य पर विविध पहलुओं से विचार किया गया है।

धर्म मानव जीवन का अनिवार्य तत्व है। लौकिक और पारलौकिक सत्य को जानने की अदम्य अभिलाषा धार्मिक चेतना के रूप में मानव सभ्यता के साथ ही अपने अस्तित्व में आयी। मनुष्य की परात्पर चेतना उसे पूर्ण से एकमेक होने के लिये प्रेरित करती रही। विविध देश और काल में अनेकानेक पंथों/धर्मों के माध्यम से परमतत्व की प्राप्ति का प्रयास किया गया।

Please cite this Article as: डॉ. जितेन्द्र शर्मा, धर्म, धर्मान्तरण और गाँधी]International Journal Of Creative Research Thoughts, Volume 3, Issue.1,January, 2015

'एकं सद् विप्राः बहुधा वदन्ति' का दार्शनिक उद्घोष एक ही साथ विविध धर्मावलम्बियों को अपने–अपने धर्म को मानने की, धर्माचरण करने की, अपने–अपने प्रभु को अपने–अपने ढंग से रिझाने की स्वतन्त्रता प्रदान करता रहा। यहाँ के तत्त्वद्रष्टा मनीषियों ने 'न मृत्युर्नशंका ने मे जातिभेदाः .... चिदानंद रूपः शिवोऽहं शिवोऽहं' कहकर मानव समाज में व्याप्त जाति, धर्म, रूप, रंग, लिंग आदि समस्त भेद–प्रभेदों को नकारकर मानवमात्र में शिवत्व और ईश्वरत्व की परिकल्पना की। ऐसी स्थिति में मत–मतान्तरों के वैविध्यजन्य विरोध का क्या मूल्य जिसमें जैसी शक्ति हो, जिसका जैसा स्वभाव हो उसी के अनुसार वह अपने कर्म और धर्म का चयन कर सकता है। बहुदेववाद की चरम परिणति एकेश्वरवाद में ही होती है। ''सर्वदेव नमस्कारः केशवं प्रति गच्छति।'' 'आत्मैवेदं सर्व इदं सर्वयदात्मा' सत्यरूप परमेश्वर हम सबों में विद्यमान है। 'हममें, तुममें खड्ग खंभ में सबमें व्यापतराम' यह आत्मबोध धार्मिक सन्तों एवं भक्तों की उदात्त रहस्यानुभूति में प्रकट है।

प्राचीनकाल से ही विविध मत मतान्तरों और सम्प्रदायों के बीच यह वैज्ञानिक और तात्विक दृष्टिकोण सनातन भारतीय आर्ष संस्कृति की थाती रही है। दूसरे के जीवन में शामिल होना और दूसरों को अपने जीवन में शामिल करना यहाँ के निवासियों का स्वभाव रहा है।

देश की स्वतन्त्रता के साथ ही हमने भारतीय संस्कृति और धर्म के सनातन आदर्श 'सर्वधर्म समभाव' को पुनः मूर्तमान करने का, धर्मनिरपेक्ष राज्य की स्थापना का संकल्प लिया। वर्तमान में भारत एक संप्रभु, धर्मनिरपेक्ष राज्य है। यहाँ हर धर्म मानने वाले को छूट है कि वह अपने धर्म के आधार पर जीवन पद्धति सुनिश्चित करे। उसके अपने धार्मिक और सामाजिक अधिकार भी सुरक्षित है। संवैधानिक व्यवस्था में हर व्यक्ति को उसकी रुचि एवं आस्था के अनुसार ईश्वर चयन का भी अधिकार है। इसी अनुसार उसे दूसरी स्वतन्त्रताओं की तरह बकायदा संविधान प्रदत्त धार्मिक अधिकार प्राप्त है। स्वतन्त्र भारत इस संवैधानिक आदर्श की दिशा में छाछठ वर्षों का लम्बा सफर तय कर चुका है। निःसंदेह इस बीच हमने ढेर सारी उपलब्धियाँ हासिल की। परन्तु इस बीच कुछ दुःखद और निराशाजनक संकेत भी मिल रहे हैं। दिनानुदिन वर्धमान अवसरवादी राजनीति, राजनेताओं का गिरता हुआ राष्ट्रीय चरित्र, उनमें अखंड राष्ट्रीय सोच का अभाव, धर्म की अंगीठी पर अपने तुच्छ स्वार्थों की रोटी सेंकने वाले तथाकथित धर्म के ठेकेदार, उलेमाओं और संतों के गर्हित कदाचरण से बढ़ती हुई धार्मिक असहिष्णुता राष्ट्रीय एकता के समक्ष बहुत बड़ी चुनौती के रूप में सामने आयी है। धर्मान्तरण का उन्माद एवं घटना इसी खंड दृष्टि का घातक प्रतिफल है। अखिल भारतीयता की कीमत पर धार्मिक अल्पसंख्यकों के नाम पर राजनीतिज्ञों द्वारा बहाया जा रहा

घड़ियाली आँसू हर राष्ट्र प्रेमी के लिये चिंता का सबब बन गया है। धार्मिक असहिष्णुताजन्य विद्वेष की इस अमॉनिशा में किंकर्तव्य विमूढ़ जनता और नेतृत्व के लिये बापू का जीवन और सन्देश विद्युतवत् चमककर उनका पथ प्रदर्शन करता है। इस असद्भावनाजन्य कुहासे से निकलने की क्षमता प्रदान करता है।

गाँधी जी के अनुसार नैतिकता का पालन करना ही सच्चा धर्म है। सत्य का ज्ञान, अहिंसा, मानव सेवा, प्रेमभावना, निःस्वार्थ कर्म, शान्ति और विनम्रता ही उनकी नैतिकता के मापदण्ड थे। सेवामय जीवन, नम्रता से भरा होता है। सच्ची नम्रता सचमुच लोक संग्रह की भावना से किया गया पूर्णरूपेण दृढ़ एवं निरन्तर कर्मयोग है। ईश्वर अविराम कर्मरत है। यदि हम उन्हीं में तदाकार हो जाना चाहते हैं तो हमें निरन्तर कर्मसाधना करनी होगी। यह कठोर साधना हमारे लिये सच्चा विश्राम होगा। यही अविराम कर्मयोग हमारी अवर्णनीय शान्ति की कुन्जी होगी।[1]

धर्म का अर्थ है जीवन के लिये ईश्वर की स्वीकारोक्ति। ईश्वर की स्वीकारोक्ति का अर्थ है—प्रेम, शक्ति और विवेक का हृदय पर शासन हो तथा स्वार्थपरता, बुरी इच्छा, अज्ञानता, अविवेक एवं ऐसे अन्य सभी संवेग जैसे—क्रोध, लालच और लालसा आदि से मुक्ति हो।[2]

प्रायः धर्म में ईश्वर के स्वरूप को लेकर मतभेद और संघर्ष की स्थिति पायी जाती है। इस सम्बंध में गाँधीजी के विचारों को स्पष्ट करते हुये एन.के. बोस कहते हैं—ईश्वर आकाश में निवास करने वाली शक्ति नहीं है। ईश्वर हम सबमें निवास करने वाली अदृश्य शक्ति है.............. ईश्वर हममें से प्रत्येक में है। अतः हमें निरपवाद रूप से प्रत्येक मानव में तादात्म्य स्थापित करना चाहिये। पुरानी भाषा में इसे आन्तरिक सहयोग या आकर्षण कहते हैं। बोलचाल की भाषा में इसे प्रेम कहा जाता है।[3]

ऐसे ईश्वर को उन्होंने कभी—कभी 'परमसत्य' और कभी 'राम' की संज्ञा दी है। कुछ आलोचक यहाँ राम से तात्पर्य अयोध्या नरेश राम लेते हुये महात्मा गाँधी पर हिन्दूवादी होने का आरोप लगाते हैं। वस्तुतः आलोचकों का यह आरोप निराधार हैं। 'हरिजन' नामक पत्र में अपने राम के स्वरूप को स्पष्ट करते हुये स्वयं गाँधी जी कहते हैं—"मेरे राम, हमारी प्रार्थनाओं के राम, अयोध्या नरेश के पुत्र ऐतिहासिक राम नहीं है वे शाश्वत, अजन्मा और अद्वितीय हैं। केवल मैं उन्हीं की पूजा करता हूँ।"[4]

ऐसे घट—घट व्यापी सत्ता को राम, रहीम, खुदा, गॉड, अल्लाह आदि किसी भी संज्ञा से संज्ञापित किया जा सकता है। 'हरिजन' पत्रिका में अपने मत को स्पष्ट करते हुये बापू ने कहा था "इस्लाम का अल्लाह वही है जो इसाइयों का गॉड और हिन्दुओं का ईश्वर है जैसे हिन्दू धर्म में ईश्वर के बहुत से नाम हैं वैसे ही इस्लाम में भी ईश्वर के बहुत से नाम हैं।

मेरे प्रभु के सहस्रों रूप हैं। कभी मैं उसका दर्शन चरखे में करता हूँ तो कभी साम्प्रदायिक एकता में तो कभी अस्पृश्यता निवारण में। उनका मानना है कि धर्म तो असहायों की सेवा है। ईश्वर असहायों व संकटग्रस्त मनुष्य के रूप में हमें दर्शन देता है। गाँधी जी के यहाँ धर्म के दो रूप हैं–एक तो व्यक्तिगत आस्था से जहाँ व्यक्ति अपने निजी विश्वासों व मान्यताओं के साथ उपासना करे व आचरण करे दूसरे सामाजिक धर्म के रूप में जहाँ सभी धर्मों के प्रति समानता की धारणा ''सर्वधर्म समभाव''जिसमें मानव समाज की सेवा करना जुड़ा है। लोक कल्याण के सन्दर्भ में धर्म और राजनीति परस्पर सहवर्ती और सहधर्मी हैं। राजनीति में धर्म की उपस्थिति राजनीति को नैतिक व मानवीय मूल्यों से जोड़ती है। इसी दृष्टि से उन्होंने अपने रामराज्य की कल्पना की थी। धार्मिक दृष्टि से रामराज्य का अर्थ है पृथ्वी पर भगवान का राज्य, राजनैतिक दृष्टि से यह पूर्ण स्वतन्त्रता है जिसमें गरीबी और अमीरी रंग व मतमतान्तर के आधार पर स्थापित असमानताओं का सर्वदा अंत हो जाता है।

प्रायः धर्म के वाह्य स्वरूप कर्मकाण्ड को लेकर संघर्ष या विद्वेष की स्थिति बनती है। कभी–कभी इसी को लेकर धार्मिक सम्प्रदायों के मध्य भयंकर रक्तपात भी होता है। वास्तव में यह सब हमारी अज्ञानताजन्य असहिष्णुता के कारण होता है। आवश्यकता है धर्म को रूढ़िगत सीमाओं से ऊपर उठकर देखा और सोचा जाय। पूजास्थल किसी के भी हों वे पवित्र हैं। मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर ईश्वर के इन भिन्न–भिन्न स्थानों में कोई अन्तर नहीं होता। मनुष्य की श्रद्धा ने उनका निर्माण किया है और उसने उन्हें जो माना वही वे हैं। 'सभी धर्म एक दूसरे के साथ ओतप्रोत हैं। प्रत्येक धर्म में कई विशेषतायें हैं किन्तु एक धर्म दूसरे से श्रेष्ठ नहीं। जो एक में है वह दूसरे में नहीं इसलिये एक धर्म दूसरे धर्म का पूरक हैं।

वास्तव में गाँधी जी धर्म विशेष की सीमाओं में बँधकर कभी भी नहीं जिये। उनका हिन्दू धर्म के साथ जितना लगाव था उतना ही प्रेम मुस्लिम, इसाई, जैन आदि धर्मों के प्रति भी था। जब सभी धर्म एक ही सत्य की प्राप्ति के विविध मार्ग है तो उसमें अच्छा या बुरा क्या? ऐसी स्थिति में धर्म परिवर्तन करना मूर्खता है। ''तात्कालिक आवश्यकता यह नहीं कि एक धर्म हो बल्कि यह है कि विभिन्न धर्मों के अनुयायियों में परस्पर आदर और सहिष्णुता हो। हम निर्जीव समानता नहीं करना चाहते परन्तु विविधता में एकता चाहते हैं।''[5]

धर्म विषयक् बापू के उक्त विचारों की मीमांसा के उपरान्त प्रश्न यह पैदा होता है कि धर्मान्तरण क्यों? क्या धर्मान्तरण उचित है? यदि नहीं तो कौन सा धर्म स्वीकार किया जाय। और

किसी धर्म को स्वीकार करते समय एक नागरिक के रूप में हमारी संवैधानिक स्थिति क्या होगी? दुनियाँ के सभी धर्मशास्त्रों को खँगाल कर देख लिया गया कि वस्तुतः सभी धर्म तात्विक रूप से एक हैं और एक ही परम सत्ता की प्राप्ति के विविध सोपान हैं। न कोई धर्म छोटा है और न कोई धर्म बड़ा। अथवा हम यूँ कह सकते हैं कि सभी धर्म अपूर्ण है और पूर्णता प्राप्ति की तरफ अग्रसर हैं। धर्मों में हमें जो अन्तर दिखलाई पड़ता है वह है–उसका वाह्य स्वरूप जिसे कर्मकाण्ड या प्रतीक कहा जा सकता है जिसका तात्विक रूप से धर्म से कोई खास रिश्ता नहीं होता है लेकिन ऐसा होते हुये भी धर्म का यह वाह्य प्रतिरूप कर्मकाण्ड बड़ा उत्तेजक होता है। जहाँ यह लोगों में समूह भावना पैदा करता है वहीं अन्य समूह या समुदाय के लोगों को पृथक् भी कर देता है। धर्म के इस वाह्य प्रतिरूप और क्रियाकलापों को हमें उसी रूप में लेना चाहिये जैसे कपड़े का धागा और ताना–बाना तो एक ही होता है परन्तु अलग–अलग रंगों से रंगे जाने पर पृथक–पृथक रंग के कपड़े तैयार हो जाते हैं। परन्तु जैसे इन कपड़ों के रंगों में किसी को लाल पसंद है तो किसी को काला। किसी को पीला तो कोई नीले पर ही दृष्टि जमाये रहता है तो कोई बैगनी पर ही प्यार लुटाता नजर आता है। ऐसे में कोई कहे कि मेरी ही पसंद का कपड़ा सबसे सुन्दर है तो यह तो केवल उसकी शेखी बघारना ही है। ठीक यही स्थिति धर्म की भी है। विभिन्न प्रकार के धार्मिक कर्मकाण्ड धर्मानुयायियों को अपने ही ढंग से ललचाते और आकर्षित करते हैं और यह उनमें ऐसी नशा पैदा कर देते हैं कि वे मरने–मारने पर उतारू हो जाते हैं। जबकि धर्म केवल आस्था और विश्वास का विषय है। धर्म के पीछे विनाश के स्थान पर विकास और सृजन की कहानी छिपी होती है। ऐसी स्थिति में धर्मान्तरण निरा मूर्खता है। धर्मान्तरण के विषय पर सम्प्रति देश में दो अतिवादी विचारधारायें प्रभावशील हैं जिनके कारण आज नहीं तो कल राष्ट्रीय एकता और धर्म निरपेक्षता खतरे में पड़ सकती है। सबसे पहले में कट्टरपंथी हिन्दू विचारधारा का उल्लेख करूँगा। दैनिक समाचार पत्र आज की एक खबर जिसमें धर्म जागरण समिति के नेता राजेश्वर सिंह सोलंकी ने कहा है कि 31 दिसम्बर 2021 तक वे इसाई और इस्लाम धर्म को भारत से खत्म कर देंगे। इसाइयों और मुसलमानों को भारत में रहने का कोई हक नहीं है।''[6] निश्चित रूप से इस तरह की बयानबाजी न तो हिन्दू धर्म की मान्यताओं के अनुकूल है न ही इससे हिन्दू धर्म का कल्याण होने वाला है और न ही इस तरह की विचारधारा और वक्तव्य से राष्ट्रीय एकता और अखण्डता को ही सुरक्षित रखा जा सकता है। इस देश पर यहाँ के सभी निवासियों चाहे वे मुस्लिम हो, इसाई हो अथवा हों किसी अन्य धर्म के मतावलम्बी, सबका समान रूप से अधिकार है। अतः किसी पंथ या धर्म के लोगों को किसी

को देश से बाहर और भीतर करने का न तो अधिकार है और न ही ऐसे कार्यों के लिये छूट ही दी जा सकती है बल्कि आवश्यकता पड़े तो कानून और दंड के द्वारा ऐसी मानसिकता को कुचल देना चाहिये। अर्थात् बहुभाषी और बहुधर्मी भारत देश में इस तरह से जोर जबरदस्ती द्वारा धर्मान्तरण पर सर्वथा और सर्वत्र रोक लगनी ही चाहिये।

लेकिन ऐसा करते समय हमें वास्तविकता और उससे उत्पन्न राष्ट्रीय खतरे को भी नजर अंदाज नहीं करना चाहिये। हमें ठंडे दिमाक से इस तथ्य पर विचार करना चाहिये कि राजेश्वर सिंह सोलंकी अथवा प्रवीण तोगड़िया जैसे नेताओं की इस सोच के पीछे की पीड़ा क्या है? वे कौन से ऐसे कारण हैं जिन्होंने प्रतिक्रिया स्वरूप सहिष्णु हिन्दू धर्माधिकारियों को सड़क पर उतरने के लिये मजबूर कर दिया है। वास्तव में इसके पीछे लगभग 60 वर्षों की अल्पसंख्यक तुष्टीकरण की घिनौनी राजनीति और इसाई मिशनरियों तथा मौलबियों द्वारा धनबल और लालच के बल पर कराया जा रहा धर्मान्तरण ही जिम्मेदार है। ''1950 के दशक में मध्य प्रदेश में हुये एक व्यापक धर्मान्तरण पर प्रस्तुत रिपोर्ट के अनुसार ईसाई मिशनरियाँ धन के प्रभाव का इस्तेमाल कर आदिवासी, गरीब, दबे–कुचले, उपेक्षित हिन्दू समाज के लोगों का धर्मान्तरण कराती थी। अकेले उड़ीसा में बालेश्वर, फलवाड़ी, गजपति, जाजपुर जिलों में बड़े पैमाने पर पिछले डेढ़ दशक में आर्थिक प्रलोभन देकर या जबरन धर्म परिवर्तन कराया गया। 23 अगस्त 2008 के स्वामी लक्ष्मणानंद की हत्या इसी विषय को लेकर की गयी थी कि वे लगातार उड़ीसा में हो रहे धर्मान्तरण का विरोध कर रहे थे।''[7]

भारतीयों का धर्म परिवर्तन करवाने में कई विदेशी सरकारों की गहरी रुचि इसलिये रहती है कि वे अपने निहित स्वार्थों के लिये इसे इस्तेमाल करती रहती है। भारत के नागालैण्ड, मेघालय, झारखण्ड, बस्तर, गोवा आदि में हमने विदेशी शक्तियों का खेल कई बार देखा है।[8]

स्पष्ट है कि ईसाई मिशनरियों और मुस्लिम तब्लीगियों की गुपचुप कार्यवाही से लाखों की संख्या में हिन्दू अपना धर्म परिवर्तन कर लेते हैं। यदि यही कुकर्म चलने दिया गया तो कुछ वर्षों में भारत मुस्लिम बहुल राज्य बन जायेगा। वर्तमान में यह संभावना अतिरंजित भले लगती हो परन्तु वास्तविकता यही है और देश का राजनीतिक नेतृत्व वोट बैंक के लाभ के लिये छद्म धर्म निरपेक्षता का लबादा ओढ़कर इस राष्ट्रीय संकट को मौन स्वीकृति दे रहा है। ''अभी साल भर पहले कांग्रेस नेता जयराम नरेश ने केन्द्रीय मंत्री पद से कहा था ''ईसाई मिशनरियों को 'लक्ष्मण रेखा' का ध्यान रखकर धर्मान्तरण कराने वाली प्रवृत्ति छोड़नी चाहिये।''[9] यह उन्होंने विशपों और पादरियों के सम्मेलन में कही थी। इस विषय पर संसदीय कार्य मन्त्री वेंकैयानायडू ने संसद में वक्तव्य देते समय

कहा कि ''धर्म व्यक्ति का निजी विषय है। संविधान में सभी को अपना–अपना धर्म मानने की छूट है, परन्तु उसकी आजादी का तात्पर्य विदेश फण्डिंग द्वारा धर्मान्तरण में छूट देना नहीं है।''[10]

स्पष्ट है धर्मान्तरण की यह प्रक्रिया राष्ट्र के समक्ष एक बहुत बड़े खतरे के रूप में उभर रही है जिसका किसी भी स्थिति में शमन होना ही चाहिये। यह शुद्ध राजनीति है। विदेशी शक्तियों और धर्मावलम्बियों का भारत राष्ट्र के विरुद्ध सोचा समझा षड्यन्त्र है। ऐसे अनैतिक और एक हद तक अराष्ट्रीय कार्य कुछ सिरफिरे अल्पसंख्यक समुदाय कर रहे हैं। वे अपने धर्म की हानि तो कर ही रहे हैं वे साथ ही उग्र हिन्दुत्ववादियों को उनके प्रति आक्रामक होने का मौका भी दे रहे हैं। अतः ऐसे धर्मावलम्बियों और उनके षड्यन्त्र को कानून और सैन्यबल से कुचल देना पड़ेगा। छद्म धर्म निरपेक्षता की ओछी राजनीति से देश नहीं चल सकता। सबको लेकर चलना है तो सबके साथ समान व्यवहार करना ही पड़ेगा। अल्पसंख्यक तुष्टीकरण की ओछी राजनीति का परित्याग कर राजनेताओं को सर्वधर्मसमभाव की सच्ची भावना को अपने कार्य व्यवहार में उतारना पड़ेगा। धर्मान्तरण विषय पर जहाँ तक संवैधानिक स्थिति का प्रश्न है संविधान के भाग–3 के अनुच्छेद–25 के अनुसार लोक व्यवस्था, सदाचार और स्वास्थ्य तथा इसी भाग के अन्य उपबन्धों के अधीन रहते हुये सभी व्यक्तियों को अन्तःकरण की स्वतन्त्रता और धर्म को अबाध रूप से मानने, आचरण करने, प्रचार करने का समान अधिकार होगा किन्तु यदि कोई धर्म परिवर्तन के लिये जोर–जबरदस्ती करता है या किसी गरीब को धन का लोभ देकर धर्म परिवर्तन कराता है तो यह निश्चित ही अनुचित है। इसलिये संगठित और छलबल से धर्मान्तरण कराने के विरुद्ध कड़ा कानून बनना ही चाहिये और उससे भी अधिक राजनेताओं को इसे लागू करने के लिये कठोर राजनीतिक इच्छा शक्ति का प्रयोग करना पड़ेगा।

निष्कर्ष रूप में मैं यही कहूँगा कि धर्म वैयक्तिक आस्था और विश्वास का विषय है। धर्म के चयन हेतु वैयक्तिक स्वतन्त्रता आवश्यक है। धर्म गोबर की तरह बाहर से थोपा नहीं जा सकता। वह कमल की तरह अंदर से खिलता है। अतः संगठित या सामूहिक जबरदस्ती से कराये जा रहे धर्मान्तरण पर रोक लगनी ही चाहिये। परन्तु जिन लोगों का जबरदस्ती धर्मान्तरण कराया गया है यदि वे स्वेच्छया 'घर वापसी' करते हैं, अपना मूल धर्म पुनः स्वीकार करते हैं तो उसमें किसी मुल्ला, मौलवी अथवा हिन्दू को ऐतराज नहीं होना चाहिये।

सन्दर्भ सूची

1 यरवदा मन्दिर, पृ.47
2 दत्त, धीरेन्द्र मोहन 'द फिलासफी ऑफ गाँधी', पृ.42
3 बोस न.के. 'सलैक्शंस फ्राम गाँधी', पृ.8
4 हरिजन, 28 अप्रैल 1946
5 यंग इंडिया, 25 सितम्बर 1925
6 दैनिक समाचार पत्र 'आज' कानपुर शुक्रवार, 19 दिसम्बर 2014
7 आज, मंगलवार, 16 दिसम्बर, 2014
8 वही, संपादकीय, 19 दिसम्बर, 2014
9 वही, वृहस्पतिवार 18 दिसम्बर, 2014
10 वही, सम्पादकीय आज मंगलवार 16 दिसम्बर, 2014